DOI: 10.51220/hjssh.v2i1.8

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities, Vol 2 pp. 61-66, 2007

गढ़वाल में गोरखा शासनकाल में दास व्यापार

सुरेश चन्दोला

इतिहास विभाग, हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय परिसर,पौड़ी गढ़वाल– २४६००१

ABSTRACT

प्रस्तुत शोध पत्र में गढ़वाल की उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन किया गया है जिसमे सन् १८०३ से १८१५ तक गोरखा शासन काल में यहाँ की संस्कृति एवं समाज का दमन किया गया।

Key words :- Gorkha regime, Garhwal, Slave business.

पंवारवंशीय शासक अजयपाल ने सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ में जिस गढ़वाल राज्य की स्थापना की, उस पर उसके वंशजों ने तीन सौ वर्षों तक एक छत्र शासन किया। यद्यपि तीन शताब्दियों के इस लम्बे युग में (सन् १५००से सन् १८०० तक) गढ़वाल राज्य को सिरमौर, कुमाँऊ, मुगलों, सिक्खों एवं रुहेलों के अनेक भयावह एवं योजनाबद्ध आक्रमणों का सामना करना पड़ा फिर भी गढ़वाल राज्य का स्वतन्त्र अस्तित्व बना रहा।

सन् १८०३ का वर्ष गढ़वाल राज्य के लिए सबसे भीषण एवं दुर्भाग्यपूर्ण वर्ष सिद्ध हुआ। इस वर्ष कुंवर पराक्रम शाह ने अपने बड़े भाई गढ़नरेश प्रद्युम्मन शाह से उनका राज्य छीनने के लिए अनेक षड़यन्त्र रचे। शीशराम एवं शिवराम नामक सकलानी बन्धुओं की सहायता से पराक्रम शाह ने गढ़वाल राज्य प्राप्त कर लिया। प्रद्युम्मन शाह के पुत्र राजकुमार सुदर्शन शाह ने खण्डूडी बन्धुओं धरणीधर एवं रमापति जैसे योग्य मन्त्रियों की सहायता से अपने चाचा से अनेक छोटे–छोटे युद्ध अपने पिता की मुक्ति हेतु भी किये।[1] इस प्रकार राज परिवार एवं राज दरबार की आपसी गुटबन्दी के कारण राजधानी श्रीनगर युद्ध स्थली बन गयी, जिसमें सैकड़ों निर्दोष व्यक्ति मारे गये। पराक्रम शाह ने प्रद्युम्मन शाह का पक्ष लेने वाली सेना को मार–मार कर राजधानी से मैदान की ओर खदेड़ दिया तथा अवसर पाकर उसने धरणीधर एवं रमापति नामक खण्डूड़ी बन्धुओं की छल से हत्या करवा दी[2]।

सितम्बर १८०३ की एक रात्रि में गढ़ राज्य में भीषण भूकम्प के झटकों से समस्त ऊँचे भवन एवं मन्दिर ध्वस्त हो गये। राजधानी श्रीनगर के अस्सी प्रतिशत भवन भूमिसात हो गये। राजप्रसाद इतना क्षति ग्रस्त हो गया कि उसके निकट तक पहुँचना असुरक्षित समझा जाने लगा। सैकड़ों की

© SHARAD

संख्या में नागरिक मारे गये। मलबे के नीचे दबने वाले पशुओं की संख्या अनगिनत थी[3]। सम्पूर्ण गढ़वाल राज्य में चारों ओर अव्यवस्था एवं अराजकता का वातारण व्याप्त हो गया।

गढ़वाल राज्य पर आयी इस विपत्ति का लाभ उठाने के लिए कुमाँऊ पर शासन कर रहे गोरखों ने यही उचित अवसर समझा। सन् १७६१ में लंगूरगढ़ी में मिली पराजय को गोरखा शासक भूले नहीं थे। कौड़िया एवं लंगूरगढ़ी के युद्धों में श्रीनगर राज्य के जवानों के उत्साह एवं पराक्रम के समक्ष गोरखों के प्रतिमान शाह जैसे वीर सेनानायकों भी अपने प्राण रक्षा हेतु युद्ध–स्थल से भाग जाना पड़ा था, परन्तु इस बार गोरखे गढ़वाल राज्य पर आयी भीषण दैवी आपदाओं का पूर्ण लाभ उठाना चाहते थे। अतः उन्होंने नेपाल से एक विशाल, सुशिक्षित एवं अनुभवी सेना मंगाकर पूरी तैयारी करके आठ–दस हजार सैनिकों को लेकर गढ़वाल राज्य पर आक्रमण कर दिया[4]। चूँकि गढ़वाल का शासन सूत्र प्रद्युम्मन शाह की राजाज्ञाओं पर ही संचालित था, अतः वे ही गढ़नरेश माने जाते थे। इस आक्रमण से भयभीत होकर प्रद्युम्मन शाह को अपने परिवार के साथ अपनी राजधानी को छोड़कर गंगाजी के पार भागना पड़ा। गंगापार के प्रदेश में गोरखा सैनिकों से पराजित होकर प्रद्युम्मन शाह को अपनी रक्षा हेतु नालागढ़ी (देहरादून) होकर कलखल (हरिद्वार)में शरण लेनी पड़ी।[5] इस प्रकार अक्टूबर, १८०३ में सम्पूर्ण गढ़वाल राज्य पर गोरखों का अधिकार हो गया।

अपने सिंहासन को बेचकर प्रद्युम्मन शाह ने गोरखों से अपने पैत्रिक राज्य को पुनः प्राप्त करने के लिए सैनिक शक्ति संगठित की और जनवरी, १८०४ में खुड़बुड़ा के मैदान में गोरखों को ललकारा। इस युद्ध में गढ़वाल के राजा की निर्णायक हार हुयी। वह युद्ध में मारा गया और गोरखे गढ़वाल के भाग्य विधाता बन गये[6]। प्रद्युम्मन शाह के सबसे छोटे भाई प्रीतम शाह को बन्दी बनाकर नेपाल भेज दिया गया। राजकुमार सुदर्शन शाह अपने भाई देवीसिंह के साथ भागकर कलखल गया, जहां पुरोहित कृपाराम के घर राजपरिवार के सदस्यों ने शरण ले रखी थी, गोरखों ने प्रद्युम्मन शाह के शव को बड़े सम्मान के साथ कलखल भेज दिया, जहां उनका अन्तिम संस्कार किया गया[7]।

जनवरी, १८०४ में खुड़बुड़ा के युद्ध के पश्चात् सम्पूर्ण गढ़वाल राज्य में दासता का युग प्रारम्भ हुआ। यद्यपि इससे पूर्व सन् १७६२ से ही गढ़वाल राज्य, नेपाल सरकार का करद राज्य बन गया था , फिर भी सन् १७६२ से सन् १८०३ तक इस गढ़वाल राज्य के आन्तरिक शासन एवं व्यवस्था का संचालन गढ़नरेश के द्वारा राज्य में पहले से चली आ रही व्यवस्था से होता रहा। नेपाल राज्य को दिये जाने वाले कर के कारण, यद्यपि प्रजा पर कर का भार बढ़ गया था, फिर भी गढ़वाल की

प्रजा ने अपने राजा के प्रति असन्तोष व्यक्त नहीं किया[८]। सन् १८०४ में गोरखों का गढ़वाल की राज्य पर प्रत्यक्ष शासन प्रारम्भ हुआ जो सन् १८१५ तक निरन्तर चलता रहा।

गोरखा सैनिक गढ़वाली जनता के साथ दासों के समान व्यवहार करते थे। उन दिनों नेपाल में कोई ऐसा सामन्त नहीं था, जिसके पास दास–दासियाँ नहीं होती थी। इन दासों को मनुष्य की श्रेणी में भी नहीं रखा जाता था। गढ़वाल राज्य में नर–नारियों का जीवन नारकीय बन गया था। गढ़वाली बच्चों की शिक्षा–दीक्षा की व्यवस्था करना राज्य के कर्तव्यों में नहीं गिना जाता था। मासूम बच्चों को भी दास बना लिया जाता था। माताओं के साथ उनके अल्पवयस्क बच्चों को भी दासता के लिये पकड़ लिया जाता था। गोरखा सैनिक छोटे–छोटे गढ़वाली बच्चों को भी अपने पास–दासी के रुप में रख लेते थे[९]। यदि कोई गढ़वाली राजस्व या दण्ड की राशि चुका पाने में असमर्थ होता, तो उसके स्त्री– बच्चों को दास–दासी के रुप में नीलाम कर दिया जाता था।यदि नीलामी में उन्हें खरीदने वाला कोई नहीं मिलता था, तो गोरखा सैनिक उन्हें अपने पास दास–दासी के रुप में रख लेते थें। पं० हरिकृष्ण खूड़ी ने अपनी पुस्तक 'गढ़वाल का इतिहास' में लिखा है–"धनियों को लूटना तथा उनकी रुपवती नारियों से बलात्कार करना विजेता गोरखों का स्वाभाविक कार्य था। जिससे उन्हें देखते ही नारियां वनों मे या घरों में छिपने लगी तथा धनी लोग धन को भूमि में गाड़ने लगे थे[१०]।"

गोरखा सैनिक बारह से सोलह रुपये तक देकर गढ़वाली युवतियों को खरीद लेते थे। सैनिकों के अत्याचारों से बचने के लिए गढ़वाली माता–पिता विवश होकर अपनी पुत्री को अनिच्छा पूर्वक गोरखा सैनिकों को सौंप देते थे। 'गढ़राजवंश काव्य' के रचियता मौलाराम तो यहां तक उल्लेख करते हैं–"गोरखा सैनिक किसी भी गढ़वाली नारी को अपने शिविर में बुला सकते थे और उससे दुर्व्यवहार कर सकते थे। रात्रि के समय गोरखा सैनिकों के शिविरों में गढ़वाली नारियों की दर्दनाक चीखें चारों ओर व्याप्त रहती थी। दुष्ट लोग अपने पड़ोसी को तंग करने के लिए उसकी स्त्री का गुणगान गोरखों से करते नहीं थकते थे, जिसका परिणाम पड़ोसी की स्त्री का गोरखा सैनिकों द्वारा शीलभंग कर दिया जाता था[११]।

गोरखा शासन में समाज में नारी की स्थिति अत्यधिक गिर गयी थी। पुरुष अपनी आर्थिक स्थिति के आधार पर घर में कई स्त्रियां रख सकता था। सन् १८१२ में तपोवन की चुंगी के ठेकेदार चौधरी कल्याण सिंह १७ पत्नियां तथा २ दासियां थी[१२]। नीतिघाटी के भोतांतिकों के घरों में भी दासियों की भरमार थी। इन दासियों से माल ढुलान हेतु भी कार्य लिया जाता था। यदि कोई दासी भारवहन करते समय भेल–ढलान से गिरकर मर जाती या नदी पार करते समय बह कर मर जाती,

तो इसे साधारण सी बात समझा जाता था। गोरखा शासनकाल में गढ़वाल की नारी को केवल भोग्य समझा जाता था। दुराचारी शासकों से प्रोत्साहन पाकर नारियों को पथभ्रष्ट करने वाले दलालों की संख्या बहुत अधिक बढ़ गयी थी। राजधानी श्रीनगर में कई व्यक्ति दूसरों की पुत्रियों एवं पत्नियों को बहला फुसलाकर उनसे गुप्त रुप से व्यभिचार करवाते थे। इस अनैतिक व्यवसाय में पुरुषों के साथ नारियां भी सम्मिलित थी। मौलाराम ने अपनी कविताओं के माध्यम से बतलाया है कि मन्दिरों में रहने वाली देव चेलियां धार्मिक वैश्या का कार्य करती थी। श्रीनगर में गंगाजी के पार राणीघाट के भगवती के मन्दिर में देवचेलियों को इस कार्य के लिए विधिवत् दीक्षा दी जाती थीं[१३]।

गढ़वाल राज्य की राजधानी श्रीनगर में एवं इसके निकटवर्ती क्षेत्रों में गोरखा शासनकाल मे वेश्याओं की संख्या अत्यधिक बढ़ गयी थी।गोरखा ओहदेदारों एवं सैनिकों के मनोरंजन के लिये वेश्याओं से विशेष कार्य लिया जाता था। ये वैश्यायें केवल अपना शरीर ही नहीं बेचती थी अपितु नृत्य–संगीत में भी ये दक्ष थी। विवाह आदि उत्सवों पर अपना नृत्य करके यह धनोपार्जन करती थी।गढ़वाली कवि मौलाराम लिखते हैं– "राजधानी श्रीनगर में वासना की तृप्ति करने वाली वैश्याओं की भी उस समय कमी नहीं थी। राजधानी श्रीनगर में हिमाचल प्रदेश के एक खत्री ने वैश्यालय खोला हुआ था, जिन्हें नृत्य–ताल–संगीत की कोई जानकारी नहीं थी ये केवल अपना शरीर बेचती थी। इन्हें पातरी शब्द से भी सम्बोधित किया जाता था। इनका मूल्य चुकाकर मनोरंजनार्थ इन्हें कहीं भी ले जाया जा सकता था[१४]। बलदेव प्रसाद मिश्र अपनी पुस्तक 'नेपाल का इतिहास' में लिखते हैं– " नेपाल के सामन्तवादी शासन में कृषि कार्य एवं घरेलू सेवाओं के लिए दास–दासियों की भारी मांग थी।इसीलिये गढ़वाल राज्य के शासक गोरखे भारी संख्या में गढ़वाली नारियों को दास–दासियों के रुप में नेपाल भेज देते थे।नेपाल में आज भी उनकी सन्तान गढ़वाली नाम की एक जाति के रुप में चली आ रही है,उसे अब नेपाल राष्ट्र की प्रजा माना जाता है[१५]।

जिन दास–दासियों को कोई नहीं खरीदता था, उन्हें एकत्रित कर चुंगीघरों में भेज दिया जाता था, जहां उनकी सार्वजनिक नीलामी की जाती थी।एटकिन्सन ने 'हिमालय डिस्ट्रिक्ट्स' में लिखा है– " उत्तर में नीति तथा माणा में एवं सम्भवतया जोहार के भोटान्तिक भी गढ़वाली दास–दासियों के प्रमुख ग्राहक थें[१६]।" ऐसा माना जाता है कि गढ़वाल से गोरखों के दमन के पश्चात् भी ये भोटिया जन–जातियां इन गढ़वाली दास–दासियों का व्यापार किया करते थे। दक्षिण में रुहेलखण्ड के रोहिला मुसलमान गढ़वाली दास–दासियों के सबसे बड़े ग्राहक थे।गढ़वाल पर गोरखा शासन में सम्भवतयाः उत्तर में जोशीमठ या तपोवन के चुंगीघरों पर और दक्षिण मे कोटद्वार तथा भाबर के चुंगीघरों पर एवं मण्डी में भी गढ़वाली दास–दासियों का व्यापार होता था।

गढ़वाली दास–दासियों की खरीद–फरोख्त की सबसे बड़ी मण्डी हरिद्वार में हर की पैड़ी थी[१७]। इस मण्डी में प्रतिवर्ष सैकड़ों गढ़वाली दास–दासी एवं बच्चे, जिनकी आयु १० वर्ष से लेकर ३१ वर्ष होती थी, बेच दिये जाते थे। अनेक ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं कि जिन माताओं की गोद में उनके तीन–चार वर्षीय बालक होते थे, उन्हें भी इस विक्रय में सम्मिलित किया जाता था। इन अभागी नर–नारियों एवं बच्चों को पशुओं से भी तुच्छ समझा जाता था। इसका प्रत्यक्ष परिणाम तत्कालीन पशुओं से उनके मूल्य की तुलना करके किया जा सकता है।

साधारण घोड़े का मूल्य	–	२५० रुपये से ३०० रुपये तक
हाथी का मूल्य	–	२०० रुपये ३०० रुपये तक
पंजाबी ऊँट का मूल्य	–	७५ रुपये
गढ़वाली दास–दासियों का मूल्य (आयुवर्ग ३ से ३० वर्ष)	–	१० रुपये से लेकर १५० रुपये तक[१८]

इस प्रकार उपरोक्त तालिका को देखकर यह आसानी से मालूम किया जा सकता है कि गढ़वाली दास पशुओं से भी निम्न स्तर पर जीवन व्यतीत करते थे। यह मूल्य केवल दास बाजार हरिद्वार तक ही सीमित था, जबकि इसके विपरीत गढ़वाल के भीतरी भागों में इन दासों का मूल्य और भी न्यून था।गारेखा शासनकाल में गढ़वाल के कुल कितने नर–नारियों को दास के रुप में बेचा गया इसका पूर्ण विवरण कहीं नहीं मिल पाता। तत्कालीन ब्रिटिश इतिहासकारों में इस विषय पर भारी मतभेद है। चूंकि दासों की खरीद–फरोख्त कहीं दर्ज नहीं थी और ना ही दासों के विक्रय से प्राप्त धन का ही लेखा–जोखा था। अतः विक्रय किये गये दासों का विवरण मिल पाना असम्भव है। मात्र अनुमान ही लगाया जा सकता है कि इस काल में सैकड़ों की संख्या गढ़वाली नागरिकों को दास के रूप में बेचा गया होगा। इस काल में अनेक ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं जब माता–पिता ने अपने भरण–पोषण के लिये अपने बच्चों को बेच दिया पुरुषों ने अपनी पत्नी अधिक संख्या में होने के कारण बेच दी[१९]। यद्यपि गोरखा शासन से पूर्व भी गढ़वाल मे दास व्यापार के अनेक उदाहरण मिलते हैं। परन्तु तब दासों की खरीद कृषि कार्य हेतु या घरेलू कार्यों हेतु ही की जाती थी, तब यह प्रथा इतनी घृणित भी नहीं थी। गोरखा शासनकाल में दास प्रथा का मुख्य आकर्षण युवतियां थीं, जिन्हें गोरखा सैनिक अपनी काम पिपासा शान्त करने के लिये स्वयं भी खरीदते थे और अपने सगे–सम्बन्धियों के लिये भी इन गढ़वाली युवतियों को नेपाल तक पहुंचाते थे[२०]।

सन् १८१५ में राज्यविहीन गढ़वाल नरेश सुदर्शन शाह के आग्रह पर ब्रिटिश ईस्ट इंडिया

कम्पनी ने गढ़वाल से सदैव के लिये गोरखा शक्ति का उन्मूलन कर दिया और गढ़वाल की जनता को गोरखों के अमानीय अत्याचारों से मुक्ति दिलायी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सन् १८०३ से लेकर १८१५ तक गढ़वाल पर गोरखा शक्ति का एकाधिकार रहा। इन वर्षों मे यदि गोरखा सामन्त चाहते तो गढ़वाल के हितार्थ कार्य करके सदा के लिये गढ़वाल की जनता का सौहार्द प्राप्त कर इस भाग पर अपना शासन कर सकते थे, परन्तु गोरखा ओहदेदारों, सैनिकों एवं राज्याधिकारियों ने मात्र १२ वर्ष के अपने अल्पकालीन शासन में गढ़वाली नारी के अस्तित्व को नोंच डाला जिससे गढ़वाल की आत्मा त्राहि–त्राहि कर उठी और अन्त में इसका परिणाम यह हुआ कि गढ़ावाल के श्रीहीन नरेश सुदर्शन शाह ने विदेशी जाति की सहायता से अपनी अभागी प्रजा को गोरखों के अत्याचारों से मुक्ति दिलायी।

सन्दर्भित ग्रन्थ-

१– डबराल, डॉ० शिवप्रसाद– उत्तराखण्ड का इतिहास, भाग– ५, पृष्ठ– १११, ११२

२,३– मौलाराम– गनिका नाटक– पर्ण, ३२(अ), (ब), ३३ (अ), (ब)

४– युगवाणी (मासिक), देहरादून– वर्ष–४, अंक–११, सितम्बर, २००४, पृष्ठ–४२

५– विलियम्स– मेम्वायर ऑफ देहरादून– पृष्ठ–६३

६,७– मियां, प्रेमसिंह–गुलदस्त तवारीख कोह–ए– टिहरी–१३३

८– मसूरी टाइम्स(साप्ताहिक)– २६ जनवरी, १९९४

९– मिश्र, बलदेव प्रसाद– नेपाल का इतिहास, पृष्ठ–२५

१०– रतूडी, पं० हरिकृष्ण–गढ़वाल का इतिहास–पृष्ठ–४४२

११– मौलाराम–गढ़राज वंश काव्य– पर्ण– ५५ब

१२– डबराल, डॉ० शिवप्रसाद–पूर्वोक्त– पृष्ठ–२८८

१३– एशियाटिक रिसर्चेज, जिल्द, ११, पृष्ठ–५०४

१४– मौलाराम–पूर्वोक्त

१५– मिश्र, बलदेव प्रसाद–पूर्वोक्त–पृष्ठ–२५

१६– एटकिनसन– हिमालयन डिस्ट्रिक्टस, जिल्द–२, पृष्ठ–६१५

१७– नवराह नई चेतना– प्रथम अंक–अक्टूबर, १९८६–वर्ष १, पृष्ठ–१९

१८– युगवाणी–पूर्वोक्त–पृष्ठ–४३

१९– फ्रेजर–हिमालय माउण्टेन्स– पृष्ठ– ४०५

२०– मिश्र, बलदेव प्रसाद–पूर्वोक्त–पृष्ठ–२७